International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 04, No. 04(I), October - December, 2022, pp. 181-184

कृषि का गांधीवादी प्रतिमान

डॉ. माली राम नेहरा*

सार

प्रस्तुत पत्र में विषय वस्तु आधारित संदर्भ–संकल्प विधि के माध्यम से इस तथ्य की पडताल की गई है कि युग–पुरूष राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के शुद्ध तर्कों व अनुकरणीय व्यवहारों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत का विकास गांव व कृषि की सच्ची व आवश्यक धारणाओं में निहित है। इस लिहाज सगांधी जी का मत था कि कृषि और ग्रम्य जीवन एक दूसरे से जुडे हुए हैं। और गांवों का जीवन स्तर सुधारने के लिए खेती की बेहतरी जरूरी है। बिना किसानों को राजनीतिक और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाए गांव को आत्म निर्भर बनाने की संकल्पना साकार होनी संभव नहीं है।

शब्दकोशः *कृषि, गांधीवादी प्रतिमान, आत्मनिर्भर, कृषि मानव सभ्यता।*

प्रस्तावना

कृषि मानव सभ्यता का हमेशा से एक आवश्यक व महत्वपूर्ण व्यवसाय रहा है। मनुष्य ने हजारों सालों पहले खेती शुरू की और जीवन की आवश्यकताओं के लिए भोजन का उत्पादन करना प्रारंभ किया, कालखंड की आगामी यात्रा में यही मनुष्य अपने रूढ व कर्मकार अर्थ में कृषक अर्थात् किसान कहलाया, जो हम सबकी जीवन रेखा का प्राथमिक व मुख्य आधार बन गया है। आज अपने सभी परिदृश्यों को पूरा करने के लिए किसान को खेती के विभिन्न तरीकों को अपनाना पडता है, अनाज का भंडारण भी करना होता है और साथ में प्रदर्शन के तरीकों को भी समृद्ध करना होता है। जैसे– जैसे खेती के तरीके विकसित होते हैं, वैसे–वैसे किसानों के लिए आशा के अनुरूप परिणाम प्राप्त करने के लिए जोखिम भी बढते जा रहे हैं। इसलिए कृषि पेशा अपने आरंभ से लेकर आज तक एक प्रकार से अनिश्चितता व जोखिमों से भरा व्यवसाय बना हुआ है। इसलिए इसकी चिंता व चिंतन करना लाजमी है और यदि यह चिंतन गांव,गुवाड व गांधी का हो तो वह चिंतन निश्चित रूप से किसानों व प्रकृति दोंनों के सतत व फायदेमंद होगा इसमें कोई संदेह नहीं।

गांधी की दृष्टि में किसान

गांधी जी जहां अपने सत्याग्रह की सफलता के लिए किसानों जैसा साहस, मौत से न डरने का जज्बा वांछनीय समझते थे, वहीं देश की आजादी हासिल करने में भी किसानों की महती भूमिका स्वीकार करते थे। 06 फरबरी 1916 को काशी हिंदू विश्वविद्यालय के उद्घाटन–समारोह में गांधी ने जो ऐतिहासिक भाषण दिया था, उसमें उन्होंने दो टूक कहा था– ''मैं जब कभी यह सुनता हूं कि कहीं कोई बड़ा भवन उठाया जा रहा है, तो मेरा मन दुखी हो जाता है और मैं सोचने लगता हूं यह पैसा तो किसानों के पास से इकट्ठा किया गया पैसा है। यदि हम इनके परिश्रम की सारी कमाई दूसरों को उठा कर ले जानें दें तो यह कैसे कहा जा सकता है कि स्वराज्य की कोई भी भावना हमारे मन में है। हमें आजादी किसानों के बिना नहीं मिल सकती। आजादी केवल वकील, डॉक्टर या संपन्न जमींदारों के वश की बात नहीं है।'' वस्तुतः किसानों के प्रति यही हमदर्दी गांधी को चंपारण के गांवों तक खींच ले गई जहां के किसान अंग्रेज द्वारा नील की खेती के दमन से त्रस्त थे। अप्रैल 1917 में चंपारण पहुंच कर, गांधीजी ने नील जमींदारों के स्वेच्छाचार के खिलाफ सत्याग्रह करके वहां के

---

* सह–आचार्य, कृषि वनस्पति विज्ञान, आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा, राजस्थान, जयपुर।

किसानों को 'तीन कठिया प्रथा' के शोषण–चक्र से छुटकारा दिलाया था। 'हिंद स्वराज' में बापू स्पष्ट शब्दों में कहते हैं– ''मैं आपसे यकीन के साथ कहता हूं कि खेतों में हमारे किसान आज भी निर्भय होकर सोते हैं, जबकि अंग्रेज और आप वहां सोने के लिए आनाकानी करेंगे, इसलिए किसान किसी के तलवार–बल के बस न तो कभी हुए हैं और न होंगे। वे तलवार चलाना नहीं जानते, न किसी की तलवार से वे डरते हैं। वे मौत को हमेशा अपना तकिया बना कर सोनेवाली महान प्रजा है।

नवंबर 1947 में किसी ने गांधीजी को चिट्ठी लिखकर कहा कि भारत के तत्कालीन मंत्रिमंडल में कम से कम एक किसान तो होना ही चाहिए। इसके जवाब में 26 नवंबर, 1947 की प्रार्थना–सभा मे महात्मा गांधी का कहना था, 'हमारे दुर्भाग्य से हमारा एक भी मंत्री किसान नहीं है। सरदार पटेल जन्म से तो किसान हैं, खेती के बारे में समझ रखते हैं, मगर उनका पेशा बैरिस्टरी का था। जवाहर लाल जी विद्वान हैं, बड़े लेख हैं, मगर वह खेती के बारे में क्या समझें, हमारे देश में 80 फीसदी से ज्यादा जनता किसान है। सच्चे प्रजातंत्र में हमारे यहां राज किसानों का होना चाहिए। उन्हें बैरिस्टर बनने की जरूरत नहीं। अच्छे किसान बनना, उपज बढ़ाना, जमीन को कैसे ताजी रखना, यह सब जानना उनका काम है। यदि हमारा किसान–मंत्री महलों में नहीं रहेगा। वह तो मिट्टी के घर में रहेगा, दिनभर खेतों में काम करेगा, तभी योग्य किसानों का राज हो सकता है।' अपनी मृत्यु से ठीक एक दिन पहले यानी 29 जनवरी, 1948 की प्रार्थना सभा में गांधी का कहना था, 'मेरी चले तो हमारा गवनर्र–जनरल किसान होगा, हमारा बड़ा वजीर किसान होगा, सब कुछ किसान होगा, क्योंकि यहां का राजा किसान है। मुझे बचपन से एक कविता सिखाई गई, 'हे किसान, तू बादशाह है।' किसान जमीन से पैदा न करे तो हम क्या खाएंगे? हिंदुस्तान का सचमुच राजा तो वही है। लेकिन आज हम उसे गुलाम बनाकर बैठे हैं...

कृषि पर गाँधी की सीख

''मिट्टी खोदना और मिट्टी की देखभाल करना भूल जाना अपने को भूल जाना है।''– खेती के पीछे के मूल दर्शन को समझने के लिए गांधी के इस कथन से बहुत कुछ सीखने को मिलता है, शायद इसलिए ही गाँधी का किसान खेत में अनाज और मन में देश प्रेम पैदा करने वाला इंसान है, गांधी का मालिक पूंजी के बल पर इतराने वाला धनकुबेर नहीं, बल्कि पूंजी को संचित कर समाज की संवृद्धि करने वाला इंसान है, ठीक इसी प्रकार गांधी का मजदूर संगठन के जोर पर मनमानी मांग रखने वाली संस्कारहीन भीड़ नहीं, बल्कि श्रम और पूंजी के बीच पुल बनाने वाला कारीगर है। किसानों व कृषि के लिहाज से गाँधीजी का जीवन–पर्यंत प्रयास पूर्वक विचार रहा कि–किसानों को उनकी उपज का वाजिब दाम मिले, न्यूनतम समर्थन मूल्य का सहारा जरूर मिले लेकिन साथ में न्यूनतम मजदूरी का कानून भी हो और उसका सहृदयता से पालना भी हो तब जाकर कहीं खेती–कृषि एक सांस्कृतिक परम्परा बन जाएगी, अर्थात् मात्र अर्थ उपार्जन की गतिविधि नहीं रह जाएगी। खेती–कृषि को लेकर बापू का मत रहा है कि–खेती–कृषि के बीच से राज्य को दूर रखा जाए। किसानों व मजदूरों में सहकारिता के विकास की जरूरत है। हमारी परम्परा में खेतिहर–परिवार हुआ करता था, जिसमें खेती से जुड़े सभी घटकों की हिस्सेदारी हुआ करती थी, गो–वंश की भी हिस्सेदारी सुनिश्चित थी, उसे आज भी संरक्षित किया जाए। आखिर में, लेकिन आखिरी नहीं, गाँधी जिस ग्रामस्वराज्य की कल्पना करते रहे हैं, उससे ऐसी ही सामाजिक–संरचना बनेगी, जिसकी आज भी महती आवश्यकता है....

कृषि का गांधीवादी सिद्धान्त व कतिपय उपाय

गांधीवादी दर्शन के मूल में यह विचार स्थापित है कि कृषि और ग्राम्य जीवन एक दूसरे से जुड़े हुए हैं और गाँवों का जीवन स्तर सुधारने के लिए खेती की बेहतरी जरूरी है। राजनैतिक और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर गाँव की संकल्पना किसानों को आत्मनिर्भर बनाये बिना साकार होनी संभव नहीं है। गांधी दर्शन के आत्मनिर्भरता के विचार में अपनी जड़ें ढूंढ़ते हुए आधुनिक परिवेश के लिए निम्न आवश्यक कदम अवश्यक उठाये जाएँ।

- सिंचाई, उन्नत बीज की उपलब्धता आदि सुनिश्चित करते हुए खरीद के उपरान्त होने वाले फसलों के नुकसान से बचाने हेतु ग्राम पंचायतों के स्तर पर कोल्ड स्टोरेज और गोदाम बनवाये जाए।

- कृषि उत्पादों के मूल्य संवर्धन के लिए खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों की उपस्थिति यदि पंचायत और मंडल स्तर पर सुनिश्चित की जा सके तो किसानों की बेहतर आय की संभावनाएं बढ़ जाएंगी।
- 2017 के मॉडल एग्रीकल्चर प्रोडयूस मार्केटिंग समिति एक्ट। (एपीएमसी एक्ट) ने यह सुविधा दी है कि किसी एक बाजार क्षेत्र के अंतर्गत एक से अधिक बाजार क्षेत्र भी स्थापित किये जा सकते है।
- राज्य सरकारों का यह प्रयास होना चाहिए कि बाजार या मंडी को किसानों के पास लाया जा सके, जिससे उत्पाद की सकल लागत में कमी आये और किसानों पर से उत्पाद को मंडी तक लाने का अतिरिक्त बोझ हटाया जा सके।
- कृषि उत्पादों के सरल विनिमय और व्यापार के लिए एक सक्षम और क्रियाशील राष्ट्रीय कृषि बाजार (NAM) जिससे उपभोक्ताओं को उत्पादकों से सीधे जोड़ा जा सके, वर्तमान किसानों की समस्या के समाधान के लिए संभावित परन्तु महत्वाकांक्षी उपाय है। इसके सफल क्रियान्वयन में उत्पादों के गुणवत्ता आधारित श्रेणीकरण के लिए वैज्ञानिक कृषिशालाओं की उपलब्धता, इंटरनेट कनेक्टिविटी इत्यादि अन्य व्यावहारिक अड़चने है।
- सरकार को तीन स्तरों पर काम करने की आवश्यकता है जिमें समर्थन मूल्य पर सरकार द्वारा ही सीधी खरीद, वास्तविक बाजार मूल्य और समर्थन मूल्य के अंतर का किसानों को भुगतान तथा निजी भण्डारणा की व्यवस्था और निजी कंपनियों को किसानों से सीधी खरीद के लिए प्रोत्साहित करने की योजना शामिल हो।
- कृषि क्षेत्र में कॉर्पोरेट निवेश बढाने की जरूरत है जिसके लिए एक प्रभावी और पारदर्शी भूमि अधिग्रहण कानून और जटिल श्रम काननों में सुधार की आवश्यकता है परन्तु इन सबके मध्य इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि किसानों के हितों को सर्वोपरि रखा जाए।

कृषि पर गाँधी –विचारों की प्रासंगिकता

गाँधी ने कृषि और कुटीर उद्योगों पर आधारित एक ग्रामीण सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था का आहावन किया। भारत के लिए गांधी की दृष्टि प्राकृतिक संसाधनों के समझदारी भरे उपयोग पर आधारित है, न कि प्रकृति, जंगलो, नदियों की सुदरनता के विनाश पर। गांधीजी की जीवनी के लेखक डीजी तेंदुलकरन ने अपने 1953 के लेख विलेज इंडस्ट्रीज में लिखा था कि–''केवल कुछ ही जानते है कि भारत की छोटी और अनियमित जोत में कृषि भुगतान प्रस्ताव नहीं है। ग्रामीण निर्जीव जीवन व्यतीत करते हैं। उनका जीवन धीमी भूखमरी की प्रक्रिया है। वे कर्ज के बोझ तले दबे हुए है।'' खेती के पारंपरिक तरीकों से किसानों की न्यूनतम जरूरतों को पूरा करने वाली न्यूनतम उपज मिलती है।मौसमी बारिश की विफलता पूरे काराबोर को चौपट कर देती है।

विक्रेन्द्रीकरण के गांधीवादी सिद्वान्त को कृषि क्षेत्र में लागू नहीं किया गया है। देश की पूरी व्यवस्था की रक्त शिरा को केंद्रीकृत कर दिया गया है और गरीब किसानों को व्यवस्था से बाहर कर दिया गया है। इस प्रवृत्ति से पता चलता है कि कृषि अब एक ग्रामीण अर्थव्यवस्था नहीं है। जैविक खेती, प्राकृतिक खेती और प्राकृतिक खाद जैसी नई तकनीकों को फिर से लागू करने से सरकार और किसान दोंनो के सामने उत्साहवर्धक परिणाम सामने आये है। उनमें से अधिकांश हमारे पूर्वजों की पारंपरिक तकनीकों को दिए गए नए नाम है। कृषि को कभी ''भगवान का पेशा'' कहा जाता था। आज की खेती उतनी दिव्य नहीं है। यह दवाब, लालच, आर्थिक प्रतिद्वद्विता और यहाँ तक कि गुलामी भी करता है। कृत्रिम रूप से पैदा किए गए मुद्दों और प्रकृति से उत्पन्न होने वाले मुद्दों से निपटने के लिए सरकारें पर्याप्त नहीं कर रही है। विफलताओं को पूरा करने के लिए मौद्रिक मुआवजे ने किसानों को पहले से कहीं ज्यादा आलसी बना दिया है। शहरों के विस्तार, औद्योगिक विकास और संसाधनों की कमी के कारण अधिक संख्या में किसान इस पेशे से बाहर हो रहे है, जिससे ''भूमि के पुत्र'' होने के उनके अधिकार का दमन हो रहा है, अतः भारतीय कृषि पेशे में छोटी जोत व प्रचलित परिस्थितियों को देखते हुए गांधी की श्रम आधारित खेती, जैविक–दृष्टिकोण, ग्रामीण–विकास का केन्द्रीय दृष्टिकोण, स्वदेशी व ट्रस्टीशिप संबँधी विचार आज भी प्रासंगिक हैं।

निष्कर्ष

गांधी ने पूरे देश के स्वराज्य के लिए असहयोग, सविनय अवज्ञा जैसे जो आंदोलन चलाए, उनके पीछे भी उनका मुख्य उद्देश्य यह रहा था कि गांवों तथा किसानों का पुनरूद्धार हो, क्योंकि उनका मानना था कि भारत अपने सात लाख गांवों में बसता है, न कि चंद शहरों में। गांधीजी यह चाहते थे कि प्रत्येक गांव अपने आवश्यकताओं की पूर्ति के मामले में स्वावलंबी हो तभी वहां सच्च ग्राम–स्वराज्य कायम हो सकता है, इसके लिए लिए उन्होंने पुरजोर स्वरूप में इस बात पर बल दिया कि जमीन पर अधिकार जमींदारों का नहीं होगा, बल्कि उसका होगा, जो उसे जोतेगा, अर्थात किसान ही उसका सच्च मालिक होगा, इसलिए गांधी जी दृढ़ स्वरूप में मानना था कि– किसान–कृषि व गाँव–गुवाड़ों का विकास ही, सही मायने में भारत का विकास है, जिसके समर्थन में न केवल उनका तार्किक चिन्तन, बल्कि उनके संपूर्ण व्यक्तित्व व कृतित्व के व्यवहारिक पक्ष भी गाँवों व किसानों के विकास को समर्पित रहे.....

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. लोढा, जितेन्द्र कुमार, गाँधी विचार का आज ग्रंथ विकास प्रकाशन, जयपुर (राजस्थान), 2019.
2. जैन, प्रतिभा, 'गाँधी–चिंतन के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य' राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर 1984.
3. राधाकृष्णान, सर्वपल्ली,– 'गाँधी अभिनंदन ग्रंथ', सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1955
4. शर्मा, विमलेश, 'अतिवादों के दौर में गांधी', मूलप्रश्न, उदयपुर (राजस्थान), अक्टूबर–दिसम्बर–2019
5. 'मेरे सपनों का भारत', सर्व–सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी (उ.प्र.) 2004
6. हिन्दी स्वराज, सर्व–सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी (उ.प्र.), 2006
7. 'आज भी प्रासंगिक हैं गांधी के विचार',प्रवक्त्प्रहिन्दी पत्रिका, सितम्बर– 2010
8. शर्मा, विमलेश, 'अतिवादों के दौर में गांधी' मूलप्रश्न, उदयपुर (राजस्थान), अक्टूबर–दिसम्बर–2019
9. राधाकृष्णान, सर्वपल्ली, –गांधीअभिनंदन ग्रंथ', सत्साहित्य प्रकाशन, नई–दिल्ली, 1955
10. 'गांधी की दृष्टि में गांव और किसान', जनसत्ता नई दिल्ली, 11 अप्रेल 2017
11. कुमार प्रशांत, 'महात्मा गांधी भारत में कैसा किसान और मजदूर चाहते थे?' बीबीसी–भारत, 2 अक्टूबर–2021

❖◆❖